Swar Sindhu: National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music
A UGC CARE listed Journal
ISSN 2320–7175 | Volume 10, Issue 01, January-June 2022
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org © The Author(s) 2022

अप्रचलित-अप्रकाशित तथा नये रागों के निर्मिति की संभावना

PRAVIN KASHINATH AHIRE[1] & DR. ASHWANI KUMAR SINGH[2]

1 Research Scholar, Department of Music Vocal, The Maharaja Sayajirao University of Barada
2 Assistanr Professor, Department of Music Vocal, The Maharaja Sayajirao University of Barada

सारांश

हमारा उत्तर हिन्दुस्तानी संगीत राग पर आधारित है। राग शास्त्रीय गायन का महत्वपूर्ण अंग है। मुख्यतः जो राग प्रचार में है उन्हें प्रचलित राग कहते हैं तथा जो राग ज्यादा प्रचार में नहीं है ऐसे रागों को अप्रचलित तथा अप्रकाशित राग कह सकते हैं। प्रचलित तथा अप्रचलित रागों का आधार लोक-रूचि, कालान्तर परिवर्तन इत्यादि बातों पर आधारित हैं। समय-समय पर गायक, वादक, संगीत के पंडित तथा संगीतगुणिजनो के द्वारा रागों की उत्पत्ति होती रही है। इन निर्मित रागों में से कुछ प्रचार में रहे हैं तथा कुछ राग ऐसे हैं जिनका प्राचीन स्वरूप आज बदल गया है तथा कुछ तो प्रचार में ही नहीं है अथवा कम है। आमिर खुसरो, उ. आमिर खाँ, पं. रविषंकर इत्यादि पंडितों, गायकों तथा वादकों ने समय-समय पर रागों की निर्मिती की है। जैसे आमिर खुसरो ने ईरानी संगीत तथा भारतीय संगीत को मिलाकर कई नये राग-रागिनियों की निर्मिती की जैसे राग साज़गिरी, फरदोस्त, सरपदा, गनम, मुवाफ़िक इत्यादि। जौनपुर के राजा सुलतान हुसैन शर्की ने जौनपुरी, तोड़ी, सिन्धु, भैरवी, रसूलतोड़ी तथा 12 प्रकार के ष्याम एवं सिन्दूरी इत्यादि नवीन रागों की रचना की। दक्षिण के पंडित व्यंकटमुखी ने गणितशास्त्र के द्वारा एक मेल से 484 राग की उत्पत्ति संभव बताई है। संगीत कला परिवर्तनषील है। इस परिवर्तनषील तत्व के कारण कालान्तर में समय-समय पर 'राग-नियम' तथा रंजकता के लक्षण को ध्यान में रखकर रागों की रचना रचनाकार द्वारा होती रही है। गणितशास्त्र के अलावा राग निर्मिती के कुछ प्रमुख प्रकार भी है जैसे किसी एक राग में स्थित स्वर को शुद्ध विकृत करके नये राग की रचना, किसी एक राग में वादी-संवादी को उलट-पुलट करने से या बदल देने से नये राग की निर्मिती, दो या दो से अधिक रागों के मिश्रण द्वारा राग निर्मिती, पूर्वांग-उत्तरांग का चलन बदलने से राग की निर्मिती, कर्नाटक संगीत पद्धति से नव राग निर्मिती तथा मुच्छना इत्यादि पद्धति से राग निर्मिती होती है। गणितशास्त्र की सहायता से 72 मेल से हमें 34848 इतने राग मिलते हैं, परंतु सबको 'राग' की संज्ञा नहीं दे सकते हैं। राग की मुख्य कसौटी 'रंजकता' है। जो राग इस कसौटी (परीक्षण) पर सही अर्थ में खरा उतरेगा उसे ही राग कहेंगे बाकी सब स्वर-समूह ही रहेंगे।

सूचक शब्द: अप्रचलित राग, अप्रकाशित राग, नव-निर्मित राग, नये राग

राग

स्वर तथा अलंकारों (वर्ण) से सुसज्जित ऐसी विशिष्ट एवं मधुर रचना, जो मनुश्य के चित्त को आनन्द प्रदान करें, ऐसी रचना को राग कहते हैं। यह शास्त्रीय गायन का महत्वपूर्ण अंग है। पूरा शास्त्रीय संगीत राग पर आधारित है।

प्रचलित राग

कुछ राग ऐसे हैं जो प्रचार में हैं, ऐसे रागों को प्रचलित राग कहते हैं। इन रागों की श्रृंखला में यमन, भैरव, मारवा, भीमपलासी, बागेश्री, मालकौंस, भूपाली, मियाँमल्हार, जयजयवंती, सारंग, बिहाग इत्यादि राग आते हैं। इन रागों का गायन-वादन ज्यादातर महेफिलों में सुनने को मिलता है।

अप्रचलित तथा अप्रकाशित राग

कुछ राग ऐसे हैं जो ज्यादा सुनने को नहीं मिलते हैं, अथवा कम सुनाई देते हैं। मतलब ज्यादा प्रचार में नहीं है, अप्रचलित कहते हैं तथा कुछ राग ऐसे भी हैं जो प्रकाशित नहीं हो पाए इन्हें अप्रकाशित राग कहते हैं। ऐसे रागों में दो अथवा दो से

Swar Sindhu: National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music
A UGC CARE listed Journal
ISSN 2320–7175 | Volume 10, Issue 01, January-June 2022
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org © The Author(s) 2022

अधिक रागों का मिश्रण दिखाई देता है। अप्रचलित रागों को 'अछोप' राग की संज्ञा दी गयी है। ऐसे रागों की बंदिषे सरलतापूर्वक प्राप्त नहीं हो पाती है। इन रागों में एक विशिश्ट स्वर समुदाय होता है तथा इस स्वर समुदाय को इन रागों में बार-बार दोहराया जाता है, जिसके कारण इन रागों का स्वरूप सामने आता रहता है। ऐसे अछोप राग आग्रा, जयपुर, रामपुर सासवान इत्यादि घरानों में ज्यादा दिखाई देते हैं। इन रागों की श्रृंखला में कई अनगिनत राग हैं। जिनकी बंदिशें अधिकतर झुमरा, एकताल, आडा चैताल, तिलवाडा तथा रूपक इत्यादि तालों में देखने को मिलती है। ऐसे रागों के लिए मध्यविलंबित लय अधिक उपयुक्त होती है। प्रचलित तथा अप्रचलित रोगों का आधार लोक-रूचि, कालान्तर परिवर्तन इत्यादि बातों पर भी आधारित है। शायद कोई राग भूतकाल में अधिक प्रचार में रहा हो; जो आज प्रचार में नहीं है। इसी प्रकार इसके विपरीत स्थिति भी हो सकती है।1

नव-निर्मित राग

नव-निर्मित राग ऐसे रागों को कहेंगे जो कालानुसार समय-समय पर जाने-अनजाने इनकी रचना रचनाकार (गायक-वादक) द्वारा होती रही है। कभी किसी राग में कोई स्वर बदलने से अथवा वादी-संवादी में फरक द्वारा, चलन भेद द्वारा, मूर्च्छना पद्धति द्वारा इत्यादि अनेक पद्धति द्वारा समय-समय पर अनेक रागों का निर्माण होता रहा है। कालान्तर में आमिर खुसरो, तानसेन, पं.रविषंकर, पं. जगन्नाथबुवा पुरोहित, उ. आमिर खाँ इत्यादि गायक-वादक तथा कई सांगीतिक विद्वानों द्वारा नवीन रागों की निर्मिती होती रही है। संगीत पहले मंदिरों में था, जैसे ही संगीत गुणियों को राजाश्रय प्राप्त हुआ तब गायक-वादकों द्वारा कई नये रागों का निर्माण भी हुआ। ऐसा होने का कारण मुसलमानों के काल में उनके दरबार में अनेक कलाकारों को राजाश्रय प्राप्त होना है। इनके दरबार में भारतीय, ईरानी तथा अरबी संगीत की बार-बार महेफिलें होती थी। आमिर खुसरो से लेकर अकबर के समय तक उत्तर भारतीय संगीत में ईरानी संगीत का प्रभाव भी रहा, मध्य युग के कुछ राग फारसी धुनों पर आधारित थे।2 भारतीय तथा फारसी संगीत के मिश्रण द्वारा अमिर खुसरो ने अनेक नये रागों का निर्माण किया। जैसे - साज़गिरी, उष्षाक, ऐमन, जिलफ़, बरारी, सरपदा, बाखरेज, मुनम, निगार, वसीत, शहाणा इत्यादि प्रमुख है।

15 वीं शताब्दी में जौनपुर के सुल्तान हुसैन शर्की ने कुछ नये रागों का निर्माण किया जैसे जौनपुर तोड़ी, भीलनी तोड़ी, रामतोड़ी, रसूली तोड़ी, सिंधु, भैरवी, जौनपुरी तथा राग ष्याम के 12 प्रकार जैसे गौरी ष्याम, भूपाल ष्याम, पूर्वी ष्याम इत्यादि नये रागों की रचना की। अकबर के समय पुंडरिक विठ्ठल नामक ग्रंथकार ने अपने ग्रन्थ 'रागमंजरी' में कई फारसी रागों का उल्लेख किया है। जैसे की रहाबी, जंगुला, निशावर, आहंग, माहुर, हिजाज, सुहा, मुष्क, इराक, आखरेज, हुसैनी, सरपदा, मुसलिक, यमन इत्यादि। तानसेन ने 'मियाँमल्हार' नामक राग बनाया। 17 वीं शताब्दी में पं. सोमनाथ द्वारा 'राग विबोध' में कई फारसी रागों का उल्लेख है। मध्यकाल से ही उत्तर हिन्दुस्तानी संगीत में कई नये रागों का निर्माण शुरू हो चुका था तथा इन रागों के स्वर मिश्र थे। उसी प्रकार जोड़ राग की संकल्पना इसी काल की देन है।
इस प्रकार विसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध तक अनेक रागों का निर्माण अनेक विद्वानों द्वारा होता रहा। परंतु इन रागों को ग्रंथाधार न होने के कारण एक राग को लेकर अनेक घरानों में मतभेद पाए जाते हैं। कुछ राग ऐसे हैं कि जिनके तीन से चार नाम भी हैं। तब कुछ राग ऐसे हैं कि जिसका नाम तो एक है परन्तु अलग-अलग तरीके से गाते हैं, जबकि कहीं-कहीं पे तो स्वरूप ही अलग है। कुछ रागों को पं.वि.ना.भातखंडेजी ने शास्त्रोक्त रीती से बांधने का काम भी किया है।3

Swar Sindhu: National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music
A UGC CARE listed Journal
ISSN 2320–7175 | Volume 10, Issue 01, January-June 2022
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org © The Author(s) 2022

इन रागों का नामकरण भिन्न-भिन्न कालों में भिन्न-भिन्न प्रकार से होता रहा। प्रथम शड़ज स्वर (आधार स्वर) से अनेक स्वरों का नामकरण हुआ। पहले शाड़्जी, आर्शभी, गांधारी इत्यादि स्वरों के आधार पर मूर्च्छना अथवा ठाठों का नामकरण हुआ। इस उपरांत भैरव, भैरवी, दुर्गा, लक्ष्मी तोड़ी इत्यादि देवी-देवताओं के नामों पर रागों का नामकरण हुआ। तदुपरान्त प्रान्त, काल तथा ऋतुओं के नाम पर रागों का नामकरण किया गया। जैसे सौराष्ट्र भैरव, वृंदावनी सारंग, बंगालभैरव, जौनपुरी, प्रभाती, हेमंत, मल्हार, बसंत, बहार इत्यादि। तदुपरान्त अनेक गुणिजनों के नाम पर रागों का नामकरण हुआ, जैसे- मियाँकीतोड़ी, चरजू की मल्हार, मीरा मल्हार, बहादुरी तोड़ी, रामदासी मल्हार इत्यादि। उसी प्रकार कुछ रागों का नामकरण पशु-पक्षियों के नामों के आधार पर भी किया गया, जैसे-हंसध्वनि, हंसकिंकणी, कोकिलध्वनी, नागस्वराली इत्यादि। हमारा संगीत परिवर्तनषील रहा है, इस वजह से रागों के नामकरण में भी परिवर्तनषीलता रही है।4

संगीत में ख्याल गायन के अंतर्गत आलाप, स्वर, ताल इत्यादि भागों का विशेष महत्व होता है। इन विविध भागों को कलाकारों द्वारा विशेष महत्व दिया जाता है तथा इन भागों में से किसी एक भाग पर किसी एक कलाकार का विशेष अधिकार होने के कारण उस कलाकार द्वारा इस शैली को अपने शिष्य परंपरा द्वारा आगे बढ़ाने पर एक विशिष्ट गायन शैली सामने आती है, जिसे घराना भी कहते हैं। इस प्रकार विशिष्ट विविध गायन शैली द्वारा घरानों का निर्माण हुआ जैसे - ग्वालियर, आगरा, जयपुर, किराना तथा पटियाला इत्यादि। यह ख्याल गायन के प्रमुख घराने रहे हैं। पं. विष्णु दिगंबर पलुस्कर, ऊ. फैयाज खान, ऊ. अल्लादिया खान, ऊ. अब्दुल करीमखान तथा ऊ. बड़े गुलाम अलीखान इन सबको क्रमश: उपरोक्त घराने के प्रवर्तक तथा प्रचारक माना जाता है। प्रत्येक घराने की अपनी गायन शैली, आवाज़ लगाने का ढंग इत्यादि स्वतंत्र है। विविध घरानों के कलाकारों द्वारा विविध समय पर रागों की निर्मिती होती रही है। वैसे ही इन घरानों के अपने निजी राग भी है, कुछ प्रचलित भी हैं तथा कुछ अप्रचलित भी है।[5]

अगर हम हमारे भारतीय संगीत की ओर नज़र डालें तब यह पता चलता है कि संगीत कला परिवर्तनशील है। पिछले कई वर्शों में समय-समय पर कालानुसार कलाकारों द्वारा कुछ नया करने की रूचि के कारण नये रागों का निर्माण भी होता रहा है तथा इस रागों में से कुछ प्रचार में भी आते रहे हैं तथा कुछ अप्रकाशित एवं अप्रचलित भी रहे हैं। समय-समय पर जो रागों की निर्मिती होती रही है इसमें 'राग-नियम' तथा 'रंजकता' का लक्षण इन दो बातों का संपूर्ण ध्यान रखा गया है।

संगीत में स्वरों के सप्तक से हमारी राग पद्धति का निर्माण हुआ है। दक्षिण के पंडित व्यंकटमखी ने गणितशास्त्र द्वारा 72 मेल से 34848 इतने राग बन सकते हैं; परंतु इन सबको 'राग' संज्ञा देना उचित न होगा, क्योंकि राग की मुख्य कसौटी 'रंजकता' है। 'रंजकता' की कसौटी पर जो राग सही उतरते हैं वही वास्तव में राग कहलाते हैं। बाकी सब तो 'स्वर-समूह' ही रहेंगे।

समय-समय पर जो नये राग बनते गए अथवा बन रहे हैं, उनके निर्मिती की संभावना कुछ इस प्रकार हैं-

- प्रचलित राग में कोई एक स्वर बदलने से मतलब की शुद्ध अगर कोमल स्वर करने से जैसे - भीमपलासी में कोमल निषाद की जगह शुद्ध निषाद का प्रयोग करने से राग 'पटदीप' एक नया राग सामने आएगा।
- प्रचलित रागों का वादी-संवादी स्वर बदलने से जैसे - राग मारवा का वादी-संवादी 'रे ध' है तथा इसके विपरीत 'ग नि' को वादी-संवादित्व प्रदान करने से एक नया राग 'पूरिया' सामने आयेगा।

Swar Sindhu: National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music
A UGC CARE listed Journal
ISSN 2320–7175 | Volume 10, Issue 01, January-June 2022
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org © The Author(s) 2022

- प्रचलित रागों का राग-चलन, अंग बदलने से जैसे - भूपाली राग का स्वरूप पूर्वांग प्रधान है तथा राग का राग-चलन अधिकतर मन्द्र सप्तक तथा मध्य सप्तक के पूर्वार्द्ध में अधिक है। अगर इस चलन को बदलकर मध्य सप्तक के उत्तरार्द्ध में तथा तार सप्तक में कर लिया जाए तब जो नवीन राग स्वरूप सामने आएगा उस स्वरूप को 'देसकार' की संज्ञा दी है।

- प्रचलित रागों के मिश्रण द्वारा राग निर्मिती- दो रागों के मिश्रण से बने राग को 'जोड़ राग' कहते हैं तथा दो रागों से अधिक रागों के मिश्रण से बने हुए राग को 'मिश्र राग' कहते हैं। बसंत-बहार, ललिता गौरी, भैरव बहार इत्यादि यह जोड़ राग है तथा ख़ट, त्रिवेणी, धानीकौंस यह सब मिश्र राग की श्रेणी में आते हैं।

- कर्नाटक पद्धति से लिए गए राग-हंसध्वनि, अभोगी, नाटकुरंजिका, नारायणी इत्यादि राग कर्नाटक पद्धति से उत्तर भारतीय संगीत पद्धति में प्रचार में आये हैं।

- राग में विवादी स्वरों का उपयोग करने से नये रागों की उत्पत्ति - गायक-वादक द्वारा कोई एक राग गाते-बजाते समय राग में न लगने वाले स्वर को विवादी स्वर के नाते सहजात से प्रयोग करता है, तब बहुदा वह आकर्षक भी प्रतीत होता है। ऐसा स्वर राग में लेने से राग का स्वरूप अगर आकर्षक बनता है, तब नव-राग-निर्मिता होना शक्य है। जैसे सारंग में धैवत स्वर का अवरोही प्रयोग करने से जो स्वरूप सामने आता है वह सामंत-सारंग है।

- उपरोक्त सभी प्रकारों में राग को रंजकता के लक्षण की कसौटी पर खरा उतरना आवश्यक है। मतलब 'राग' संज्ञा के लिए 'रंजकता' का लक्षण का विचार करना आवश्यक है। साथ में 'राग-नियम' का भी ध्यान रखना चाहिए।

- राग के स्वर सप्तक में एक स्वर की विकृति द्वारा राग की उत्पत्ति, जैसे - भूपाली राग के स्वर 'सा रे ग प ध सां' है। इन स्वरों में अगर शुद्ध ऋषभ के स्थान पर ऋषभ स्वर कोमल किया जाय तथा पूर्वांग को ही प्राधान्य दिया जाय तब जाकर 'जैत' नामक राग सामने आता है। इस अछोप राग का स्वरूप - सा, रे रे सा, प ग रे सा, सा, प़ ध़ प़ सा है। तथा इस राग का राग-समय सायंकाल है एवं षड़ज, गंधार तथा पंचम न्यास स्वर है। इस प्रकार इसके विपरीत भूपाली राग के स्वरों में शुद्ध ऋषभ की जगह कोमल ऋषभ करके पूर्वांग की जगह अगर उतरांग को विषेश महत्व दिया जाय तो 'धन्यधैवत' नामक अप्रचलित राग सामने आता है। धन्यधैवत का चलन मध्य तथा तार सप्तक में होने से 'देसकार' राग की तरह चलन रहेगा। इस राग का स्वरूप इस प्रकार है - सा ध प, ग प ध सां, ध, प, ग, रे रे सा। राग का मुख्य अंग 'सां , ध सां प, ग प ध प, ग रे सा'। धैवत तथा ऋषभ वादी-संवादी है। गायन समय रात्रि का अंतिम प्रहर है। इसी प्रकार राग भूपाली के स्वरों में शुद्ध गंधार की जगह कोमल गंधार का प्रयोग किया जाय तब 'शिवरंजनी' नामक राग सामने आएगा। राग शिवरंजनी का मुख्य अंग 'ग प ध सां, ध प ग, रे सा। 'प सा' वादी-संवादी है। 'ग प सा' न्यास स्वर है। गायन-समय मध्यरात्रि तथा थाट काफी है। इसी प्रकार भूपाली में शुद्ध धैवत की जगह कोमल धैवत का प्रयोग करने से और एक नया स्वरूप सामने आएगा।

- राग के स्वर सप्तक में दो स्वरों की विकृति द्वारा राग की उत्पत्ति - राग भूपाली के स्वरों में शुद्ध ऋषभ गंधार के स्थान पर अगर कोमल ऋषभ तथा कोमल गंधार का प्रयोग किया जाय तब और एक नया स्वरूप सामने आएगा। जैसे - सा रे ग, ध़ सा, रे ग, प ध प, ध सां, रें गं रें सां, ध प, ग रे ग रे सा। इस स्वरूप को देखने से यह पता चलता है कि तोड़ी का कोई अप्रकाशित प्रकार हो सकता है।

Swar Sindhu: National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music
A UGC CARE listed Journal
ISSN 2320–7175 | Volume 10, Issue 01, January-June 2022
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org © The Author(s) 2022

राग भूपाली के स्वरों में शुद्ध ऋषभ धैवत के स्थान पर कोमल ऋषभ तथा कोमल धैवत का प्रयोग किया जाय तथा इस स्वरूप के पूर्वांग को प्राधान्य दिया जाय तब एक नवीन राग स्वरूप सामने आएगा जिसे राग 'रेवा' की संज्ञा दी गई है। राग रेवा यह प्रचार में कम है। यह राग अप्रचलित रागों की श्रेणी में आता है। राग रेवा का मुख्य अंग- सा, ग रे ग, रे सा, प ग, ध प, ग रे ग, रे सा। इस राग में ऋषभ-धैवत को वादी-संवादित्व देकर पंचम स्वर को न्यास स्वर मानकर गायन-समय सायंकालीन माना गया है। इसके विपरीत भूपाली राग के स्वरों में ऋषभ तथा धैवत को कोमल करके पूर्वांग के विपरीत उत्तरांग को प्राधान्य दिया जाय तब 'विभास' नामक राग सामने आता है। राग विभास का स्वरूप - सा, रे सा, ग प ध प, ग प, ग रे सा, ध ध प, ध सां, रें रें सां, ध ध प, ग प ग रे सा। इस राग का चलन मध्य तथा तार के सप्तक में है। 'ध रे' वादी-संवादी है। राग-समय प्रातः काल है। उपरोक्त दोनों राग भैरव थाट जन्य है।

राग भूपाली के स्वरों में शुद्ध गंधार, धैवत के स्थान पर कोमल 'ग ध' का प्रयोग किया जाए तब जो नवीन स्वरूप सामने आएगा इसे 'लीलावती' राग संज्ञा है। यह राग भी अप्रकाशित राग की श्रेणी में आता है। इस राग में गंधार तथा पंचम स्वरों को प्राधान्य दिया गया है। राग का स्वरूप-सा रे ग, ग रे सा, ध़ सा, सा रे ग, ग प ध सां, रें सां, ध प, प ध प, ग रेसा।

राग भूपाली के स्वरों में शुद्ध 'रे ग ध' की जगह कोमल 'रे ग ध' का प्रयोग किया जाय तब जो स्वरूप सामने आता है। इसे हम भूपालतोड़ी कहते हैं। यह राग भी अप्रचलित रागों की श्रेणी में आता है। यह एक तोड़ी का प्रकार है। इस राग में धैवत तथा गंधार इन स्वरों को प्राधान्य दिया जाता है। इस राग का स्वरूप कुछ इस प्रकार है - सा रे ग, रे सा, ध़ सा रे ग, रे ग, प, ग प ध सां, ध सां रें गं रें सां, ध प ग, प रे ग रे सा।

उपरोक्त जिस पद्धति से राग भूपाली के माध्यम से हमने अन्य रागों की निर्मिती की है अथवा खोजा है। उसी प्रकार से हम अन्य कोई औडव राग के प्रकार द्वारा नये राग खोज सकते हैं या निर्मित कर सकते हैं। जैसे मालकौंस राग के स्वरो (सा ग म ध नि) में फरक करने से मतलब की मालकौंस राग में निशाद शुद्ध करने से राग चंद्रकौंस के स्वर सामने आते हैं। इसी प्रकार राग मालकौंस में गंधार, धैवत तथा निशाद को शुद्ध करने से जो स्वरों का स्वरूप सामने आता है, वह 'भिन्नशड़ज' राग का स्वरूप है। वैसे ही राग मालकौंस में धैवत तथा निशाद शुद्ध करने से 'राजेश्वरी' राग के स्वर सामने आते है। राजेश्वरी यह एक अप्रचलित राग है। राजेश्वरी राग का आरोह-अवरोह पकड़ स्वरूप - सा, ग म ध, नि सां। सां नि ध म ग सा। म ध नि सां, नि ध, म ग म ग सा।

उपरोक्त पद्धति द्वारा राग दुर्गा से भी नये रागों की निर्मिती शक्य है।[6]

राग दुर्गा (सा रे म प ध) के स्वरों में से शुद्ध मध्यम हटाकर उसके स्थान पर तीव्र मध्यम का प्रयोग करने से राग 'श्रीकल्याण' के स्वर सामने आते हैं। यह एक अप्रचलित राग है। इस राग का आरोह-अवरोह पकड़ स्वरूप इस प्रकार है - सा रे म प, ध सां। सां ध प, म प रे, सा। सा ध, सा रे म प, रे सा। वैसे ही राग दुर्गा में शुद्ध धैवत के स्थान पर कोमल धैवत का प्रयोग किया जाय तब 'शोभावरी' नामक राग के स्वर सामने आते हैं। जिसका आरोह-अवरोह, पकड़ स्वरूप इस प्रकार हैं - सा रे म प, ध सां। सां ध प, म रे सा। म प, ध म प, रे म प रे सा हैं। राग दुर्गा के स्वरों में शुद्ध 'रे ध' के स्थान पर कोमल 'रे ध' का प्रयोग करने से भैरव थाट की 'गुणक्री' के स्वर सामने आते हैं। राग गुणक्री का स्वरूप - सा रे सा, ध़ सा रे सा, म प म रे सा।

Swar Sindhu: National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music
A UGC CARE listed Journal
ISSN 2320–7175 | Volume 10, Issue 01, January-June 2022
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org © The Author(s) 2022

उपरोक्त रीति से राग धानी (सा ग म प नि) में शुद्ध मध्यम की जगह तीव्र मध्यम का प्रयोग करने से मधुकौंस राग के स्वर मिलते हैं। इस राग का आरोह-अवरोह स्वरूप इस प्रकार है - नि़ सा, ग म प, नि सां। सां नि प, म ग सा। पकड़ - ग म प, नि प म ग, म ग सा नि़ ग सा।

वैसे ही राग धानी में कोमल निषाद के स्थान पर शुद्ध निषाद का प्रयोग करने से जो राग सामने आएगा इसे 'मधुरंजनी' कहेंगे। मधुरंजनी एक अप्रकाशित राग है। इस राग का आरोह-अवरोह स्वरूप इस प्रकार है - सा, ग म प, नि सां। सां नि प, ग म प, ग म ग सा। पकड़ - नि सां नि - प, ग म प, ग म ग, सा नि़।[7]

उपरोक्त रीति से हमें यह पता चलता है कि प्रचलित औडव, षाडव तथा औडव-षाडव रागों में एक, दो अथवा उससे अधिक स्वरों को विकृत अथवा शुद्ध करने से नये रागों की निर्मिती हो सकती है।

कुछ रागों का निर्माण मूर्च्छना पद्धति द्वारा भी किया जा सकता है - जैसे राग चंद्रकौंस (सा ग म ध नि) के मध्यम स्वर को षडज़ मानकर राग चंद्रकौंस के स्वरों को क्रमश: बजाने से राग मधुकौंस (सा ग म प नि) के स्वर सामने आयेंगे। इसी प्रकार राग भिन्न षड़ज़ के गंधार स्वर को अगर हम षडज़ मानेंगे तथा भिन्नषडज़ राग के बाकी के स्वर क्रमश: बजाते हैं तब भैरव थाट का 'गुणक्री' राग के स्वर सामने आते हैं। इस प्रकार मूर्च्छना पद्धति द्वारा भी कई रागों की निर्मिती हो सकती है।[8]

उपसंहार

स्वर और वर्ण से सुषोभित रचना जो चित्त का मनोरंजन करे ऐसी रचना राग कहलाती है। जो राग प्रचार में है इन्हें प्रचलित राग कहते हैं। इस प्रकार जो राग प्रचार में कम रहते हैं उसे अप्रचलित राग कहते हैं। राग निर्माण विधि के लिए सबसे कम स्वरों वाले औड़व, षाड़व अथवा औड़व-षाड़व जाती के राग नियमों से प्रारंभ करते हैं।

नये संशोधनात्मक गायकी के प्रकारों से कई नवीन रागों की आवश्यकता द्वारा रिक्तखंड भरने जरूरी लगते हैं। नव निर्मित रागों में प्रथम प्रकार औडव दूसरा प्रकार षाडव तथा तीसरा प्रकार औडव-षाडव का प्रयोग सरल नियम बनता है। राग निर्माण विधि का सहज और सरल प्रयोग, दो रागों का मिश्रण, योग्य प्रयोग माना जाता है। जिससे श्रोताओं को नवीन गायकी तथा नये राग मिलते हैं।

काल-चक्र के क्रम से देखा जाए तब अपने गायकी में नवीनता को प्रमाणित करने हेतु अप्रचलित रागों का गायन तथा नव-निर्मित राग के गायन से हम रागों की संख्या बढ़ाते रहे हैं। उसी समय अज्ञानता के कारण मुख्य राग का प्रचलन कम होने लगता है। और नव-निर्मित राग, अप्रचलित राग एवं अप्रकाशित राग की श्रेणी में आ जाते हैं। भारतीय संगीत में जो राग प्रचलित है वह कालखंड से अप्रचलित राग बनते हैं और जो अप्रचलित राग है; वैसे राग प्रचार में आते रहते हैं।

जो राग अप्रचलित होते हैं वह भी अपने अन्दर संगीत के तत्व रंग, रस, भाव अपने अंदर समाये हुए होते हैं। जो राग अप्रचलित होते हैं उसे संगीत की धरोहर के रूप में संजोये रखना चाहिये। बाद में कोई कलाकार अपनी इच्छा और लगन से उस राग को प्रचार में लाकर प्रचलित कर सकता है। लेकिन इसी क्रम की निरन्तरता के लिए पहले अप्रचलित तथा अप्रकाशित राग संगीत समाज की धारा में मिलाने चाहिए तथा नव-निर्मित रागों का प्रचलन अपनी इच्छा व लगन से प्रचार में लाने चाहिए।

संगीत जगत के लिए अप्रचलित तथा अप्रकाशित रागों को संग्रहित करना चाहिए तथा इन रागों का प्रचार-प्रसार करना चाहिए एवं क्रमबद्ध तरीके से पहले प्रचलित तथा बाद में अप्रचलित रागों की प्रस्तुति करनी चाहिए।

संदर्भ सूची

1) सुधा माथुर. (2006). हिन्दुस्तानी संगीत की राग-सम्पदा. संजय प्रकाशन, दिल्ली. पृ. 15
2) अनया थेत्ते. (2013). नवरागनिर्मितीची तत्वे. संस्कार प्रकाशन, मुंबई. पृ. 37
3) अनया थत्ते. (2013). नवरागनिर्मितीची तत्वे. संस्कार प्रकाशन, मुंबई. पृ. 38,39,40
4) भोला दत्त जोशी. (1994). संगीत शास्त्र तथा राग-माला. सरोज प्रकाशन, दिल्ली. पृ. 142
5) शंकर अनंत टेंकशे. (1895). नव-राग-निर्मिती. अखिल भारतीय गांधर्व महाविद्यालय मंडल, मुंबई. पृ. 4
6) शंकर अनंत टेंकशे. (1895). नव-राग-निर्मिती. अखिल भारतीय गांधर्व महाविद्यालय मंडल, मुंबई. पृ. 9 से 15
7) शंकर अनंत टेंकशे. (1895). नव-राग-निर्मिती. अखिल भारतीय गांधर्व महाविद्यालय मंडल, मुंबई. पृ. 27
8) शोधार्थी के मतानुसार।